फरवरी १९९३ हिंदी पत्रिका में प्रकाशित

धम्मवाणी

सब्ब दानं धम्मदानं जिनाति,
सब्ब रसं धम्मरसं जिनाति।
सब्ब रतिं धम्मरतिं जिनाति,
तण्हक्खयो सब्ब दुक्खं जिनाति॥

– धम्मपद २४/२१

–धर्म का दान सब दानों को जीत लेता है, याने सब दानों से श्रेष्ठ है। धर्म का रस सब रसों को जीत लेता है, याने सब रसों में श्रेष्ठ है। धर्म में रमण करना सभी रमण-सुखों को जीत लेता है, याने सब रतियों में श्रेष्ठ है। तृष्णाक्षय सब दुःखों को जीत लेता है, अर्थात् सबसे श्रेष्ठ सुख है।

धन्य हैं धर्म सेवक !

धन्य हैं धर्म-सेवक जो नितान्त निःस्वार्थभाव से धर्म-शिविरों के आयोजन और व्यवस्था का भार हँसते-हँसते वहन करते हैं। धर्म-शिविर की सफलता में धर्म-शिक्षक का जितना बड़ा दायित्व और श्रम होता है, इन धर्मसेवकों का उससे कम नहीं होता। सामान्य साधक इस बात से अनभिज्ञ ही रहता है कि शिविर की सफलता में एक धर्मसेवक कितना बड़ा सहयोग दे रहा है!

शिविर की तारीखें निष्चित होते ही धर्मसेवकों का सेवाकार्य आरम्भ हो जाता है। उसकी सूचना विपश्यना पत्रिका में प्रकाशित की जानी आवश्यक है। विपश्यना का अंक समय पर प्रकाशित करने के लिए मैटर प्रेस में भेजना, उसका प्रूफ पढ़ना और छपने पर सभी पुरानें साधकों के पते पर पोस्ट करना – सारा काम धर्मसेवक ही करते हैं। पत्रिका के अतिरिक्त हिन्दी और अंग्रेजी में शिविर-सूचना के पत्रक छपाए जाते हैं जो कि किसी शिविरार्थी द्वारा पूछ-ताछ किए जाने पर उसे भेजे जाते हैं। जब कोई व्यक्ति शिविर में सम्मिलित होनें की रुचि प्रकट करता है तो आवेदन-पत्र सहित शिविर के अनुशासन की नियमावली भेजी जाती है। किसी के विशेष प्रश्न होते हैं तो धर्मशिक्षक से पूछकर अन्यथा सामान्य प्रश्नों के उत्तर धर्मसेवक द्वारा ही दिए जाते हैं। यों बुकिंग का काम आरम्भ हो जाता है। एक साथ अनेक शिविरों की सूचना प्रकाशित होती है अतः सबसे समीपवर्ती शिविर की अधिक, परन्तु आगे के अनेक शिविरों की बुकिंग के भी आवेदन-पत्र आने ही लगते हैं। जिन्हें जिस-जिस शिविर में स्वीकृति दी जाती है, उस-उस शिविर की तालिका में उनका नाम, पता तथा प्राप्त विवरण दर्ज किए जाते हैं।

धर्मसेवक को यहीं से शिविरार्थी का सहयोग आवश्यक हो जाता है। जो शिविरार्थी समझदार और जिम्मेदार होते हैं वे प्रवेश-पत्र में पूछे गए सभी प्रश्नों का ठीक-ठीक और पूरा उत्तर देते हैं। परन्तु कुछ एक लापरवाह होते हैं और इन प्रश्नों का महत्व नहीं समझते। वे उत्तर अधूरा देते हैं अथवा नहीं ही देते और इस कारण धर्मसेवक के लिए ही नहीं बल्कि अपने लिए भी कठिनाई पैदा कर लेते हैं। आवेदन पत्र के सारे प्रश्न सार्थक होते हैं, निरर्थक एक भी नहीं। इन्हीं सूचनाओं के आधार पर धर्मसेवक शिविर आरम्भ होने के एक सप्ताह पूर्व से ही व्यवस्था का काम शुरू कर देते हैं। शिविरार्थी नया है या पुराना? पुराना है तो कितना पुराना? देशी है या विदेशी? हिन्दी समझता है या नहीं? पुरुष है या महिला? किस उम्र का है? रोगी है या निरोगी? रोगी है तो कैसे रोग से पीड़ित है? इन जानकारियों के आधार पर शिविरार्थियों के लिए निवास-स्थान निधार्रित किए जाते हैं। ताकि प्रत्येक साधक को उसकी आवश्यकता और योग्यता के अनुसार अनुकूल स्थान मिले और वह शिविर का अत्यधिक लाभ ले सके। शिविरार्थी जब आवेदन-पत्र के साथ पूरा विवरण दे देता है तो व्यवस्थापक का काम समय पर तैयार रहता है। शिविर आरम्भ होने के दिन जब थोड़े से समय में इतने लोगों की भीड़ एक साथ एकत्र होती है तो उन्हें देर तक विद्यापीठ के बाहर प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। यदि लोगों के आने के बाद ही यह विवरण प्राप्त हो तो स्थान-निर्धारण के काम में देर लगनी स्वाभाविक है और अनेकों को मुख्य द्वार के समीप बहुत समय तक प्रतीक्षा करनी ही पड़ती है।

एक और बड़ा कारण है जिसकी वजह से लोगों को लम्बी प्रतीक्षा करनी पड़ती है। अनेक लोग इस माने में लापरवाह होते हैं कि बुकिंग न भी कराई तो क्या हुआ, जाने पर किसी न किसी प्रकार स्थान तो मिल ही जायेगा – अतः बिना बुकिंग के ही चले आते हैं। ऐसे बिना बुकिंग कराए आने वालों में नए ही नहीं, कई पुराने साधक भी होते हैं। यह सच है कि धर्म-शिक्षक की मनोभावना के अनुकूल धर्मसेवक भी यही चाहते हैं कि धर्म-गंगा के समीप पहुँचकर कोई साधक प्यासा न लौट जाय। परन्तु इस मैत्रीपूर्ण सद्भावना का दुरुपयोग करना उचित नहीं है। यदि आने के पूर्व तार या टेलीफोन द्वारा भी सूचित कर दें तो व्यवस्थापक समय रहते उचित व्यवस्था कर लें।

बिना बुकिंग और बिना पूर्व सूचना के शिविर में चले आना जिस प्रकार कठिनाई पैदा करता है उसी प्रकार बुकिंग करवाकर बिना सूचना दिए गैरहाजिर रह जाना भी कठिनाई का कारण बनता है। यह सही अनुमान तो कैसे लगाया जाय कि बुकिंग करा लेने वालों में से कितने लोग नहीं आयेंगे? और किस प्रकार के लोग नहीं आयेंगे? कभी यह संख्या दस प्रतिशत ही होती है तो कभी पचास प्रतिशत तक पहुँच जाती है। बुकिंग करा लेने के बाद किसी अपरिहार्य कारण से आना न हो सके, यह समझ में आ सकता है। परन्तु गैरजिम्मेदारी उनकी होती है जो न आ सकने की सूचना तक नहीं देते। यदि आना सम्भव न हो तो कम से कम सप्ताह पूर्व ही सूचना भेज दें। किसी कारणवश कायक या संकटापन्न अवस्था में आना रुका है तो एक-आध दिन पूर्व ही तार या टेलीफोन से सूचना भेज देने पर व्यवस्थापक को बड़ी सहूलियत मिलती है।

शिविर की बुकिंग कभी-कभी एक महीने पूर्व और कभी-कभी उससे भी पूर्व बंद कर देनी होती है। विद्यापीठ जितने व्यक्तियों के निवास की सुविधा है, यदि उससे अधिक हो जायें तो अत्यधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है। बुकिंग का रकेन आनेवालों की सही सूचना न मिलने के कारण अनुमान के आधार एक निश्चित संख्या तक नाम आ जाने के बाद बुकिंग रोक दी जाती है ताकि सबको उचित स्थान दिया जा सके। परन्तु अन्तिम दिन तक अनेक लोगों के अत्यन्त आग्रहभरे अनुरोधपूर्ण पत्र व टेलीफोन आते रहते हैं। उन्हें मजबूरीवश मना करना पड़ता है। जो शिविरार्थी बुकिंग का रकर अन्तिम दिन तक भी न आने की सूचना नहीं भेजता वह नहीं समझता कि अपनी नादानी के कारण कितने बड़े दोष का भागी बन रहा है! न खुद धर्मरस का पान कर सका और न ही अपने स्थान पर किसी अन्य आतुर दुखियारे को अपनी प्यास बुझाने दी। बिना पूर्व सूचना दिए गैरहाजिर रह जाना सचमुच बड़ी दोषपूर्ण बात है।

इसी प्रकार बिना पूर्व सूचना दिए चले आना भी कम दोषपूर्ण नहीं है। ऐसे लोगों को विद्यापीठ की सुरक्षित भूमि के बाहर प्रतीक्षा करनी पड़ती है। जब तक शाम की अन्तिम गाड़ी के यात्री न आ जायें तब तक व्यवस्थापक उन्हें प्रवेश देने में असमर्थ होता है। जिसने बुकिंग कराई है उसे तो प्राथमिकता देनी ही होगी। बहुत बड़ी संख्या में लोगों को विद्यापीठ के प्रांगण के बाहर प्रतीक्षा करनी पड़ती है जो कि शिविरार्थियों और सेवकों दोनों के लिए बड़ी अप्रिय स्थिति होती है। थोड़े से समय में इन सभी व्यक्तियों का विवरण तैयार करना और उनके लिए एक-एक के अनुकूल स्थान निर्धारित करना, वह भी ऐसी अवस्था में जबकि स्थान लगभग पूरी तरह भर चुका हो, कितना कठिन काम है? यह वही समझ सकता है जो व्यवस्था का भार सँभालता है!

नया शिविरार्थी गैरजिम्मेदारी का व्यवहार करे तो किसी सीमा तक क्षम्य है परन्तु अनेक बार ऐसी गलतियां पुराने साधक करते रहते हैं। कई बार ऐसी स्थिति सामने आती है कि कोई पुराना साधक लिखता है –वह अपने साथ इतने साधक और ला रहा है, उनके लिए जगह अवश्य रखें। इन व्यक्तियों के न नाम भेजता है, न अन्य विवरण। अब उन्हें किस श्रेणी में रखा जाय? – नया-पुराना, पुरुष-महिला? जब ऐन वक्त पर आ गए तो ही उनके विवरण मालूम करके समुचित व्यवस्था करनी पड़ती है। कभी-कभी यह भी होता है कि पुराना साधक अकेला आकर कहता है –इतने लोग आने वाले तो थे परन्तु किसी कारणवश नहीं आ पाये। भला मानुस! एक दिन पूर्व भी उनके न आने की सूचना देने की जिम्मेदारी को नहीं समझता!

कुछ पुराने साधक ऐसे भी हैं जिन्होंने आवेदन-पत्र स्वयं साइक्लोस्टाइल करवा लिए हैं और भरवाकर अपने इष्ट-मित्रों की बुकिंग करवा लेते हैं। परन्तु उन्हें अनुशासन के कड़े नियम नहीं समझा पाते। ऐसी घटनायें अक्सर होती हैं कि पुराने साधक के उत्साह बाहुल्य से भेजा हुआ साधक शिविर के कठोर अनुशासन से घबराकर धर्मसेवकों से रोषपूर्ण व्यवहार करता हुआ कहता है, इतना कठोर अनुशासन हमें पहले क्यों नहीं बताया गया? पूछने पर कहता है हमारे मित्र ने हमें नियमावली पढ़ने के लिए ही नहीं दी। इस नए साधक ने बिना नियमावली पढ़े आवेदन-पत्र पर वचनबद्ध होकर हस्ताक्षर करने की भूल की सो तो की ही, उससे बड़ी भूल उस पुराने साधक की है जो उसे नियमावली पढ़वाए बिना ही शिविर में भेज दिया। शिविर में आया हुआ ऐसा व्यक्ति अनुशासन की गम्भीरता को बिल्कुल नहीं समझता। अपनी भी हानि करता है, औरों की भी हानि का कारण बनता है। व्यवस्थापकों के लिए बोझ बन जाता है। ऐसे लोग अनुशासन का उल्लंघन करते हुए अवकाश के समय छोटा समूह बनाकर बातचीत करते हैं। ध्यान के समय आराम करते हैं अथवा नहाने और कपड़ा धोने में समय बिताते हैं। ध्यान-कक्ष के बाहर चहलकदमी करते हैं, यहां तक कि अधिष्ठान के समय भी घंटे भर ध्यान में नहीं बैठते। रात देर तक नहीं सोते, निवास स्थान पर गप्प-गोष्ठी चलती है। गम्भीर साधकों के प्रति तप-शत्रु होने का दोष बांधते हैं। स्पष्ट है कि उन्हें शिविर के अनुशासन की गम्भीरता से जरा भी अवगत नहीं कराया गया।

कभी-कभी ऐसा भी देखा गया है कि कोई नया साधक आकर कहता है कि वह तो केवल पांच या सात दिन की ही छुट्टी लेकर आया है, पूरे दस दिन नहीं रह सकता। कोई कहता है आज मेरा कोर्ट में केस है, एक दिन के लिए तो जाना ही होगा। कोई कहता है घर में बच्चा बीमार है, एक बार तो घर जाकर आना ही होगा। स्पष्ट है कि शिविर में शामिल होने के बाद अनिवार्य रूप से दस दिन तक यहीं रहने का कड़ा नियम उन्हें बताया तक नहीं गया।

आचार-संहिता में स्पष्ट रूप से बताया गया है कि विद्यापीठ में रहते कोई साधक कर्म-कांड, पूजा-पाठ, भजन इत्यादि नहीं करेगा परन्तु फिर भी धर्म सेवक को बार-बार शिविर-काल में इन बातों को बन्द करवाने का अप्रिय कार्य भी करना पड़ता है। यह भी स्पष्ट कहा गया है कि लोग शिविर में गण्डे, ताबीज, माला आदि मंत्राभिषिक्त वस्तुयें धारण करके न बैठें, तब भी कोई साधक इस चेतावनी की अवहेलना करके उन्हें छिपाकर पहने रहता है और जब शिविर में आगे चलकर अपने मन के भीतर शल्य-क्रिया की सी गहन एवं मार्मिक प्रतिक्रियाएं चलने लगती हैं और कठिनाइयां उभरती हैं तो असलियत का पता चलता है कि साधक-साधिका ने नियमों का पालन नहीं किया है। अतः फिर एक अप्रिय स्थिति उत्पन्न होती है जब कि साधक से उसे उतारकर व्यवस्थापक के पास रखने और यदि वह तैयार न हो तो शिविर छोड़ देने के लिए कहा जाता है।

अनेक कृतज्ञ और उदार साधक धन्यवाद के पात्र हैं जिनके दान-स्वरूप विद्यापीठ में कुछ खाटें, तकिए, गद्दे और मच्छरदानियां आदि उपलब्ध हैं। परन्तु अभी भी पर्याप्त संख्या में ओढ़ने-बिछाने की चद्दरें कम्बल आदि नहीं हैं। अतः साधक से इन्हें अपने साथ लाने का अनुरोध किया जाता है। फिर भी देखा गया है कि नये तो नये, कभी पुराने साधक भी इनके बिना ही आ जाते हैं और इनकी मांग करते हुए व्यवस्थापक को कठिनाई में डाल देते हैं। नहीं मिलने पर लोग गद्दों पर ही सो जाते हैं और उन्हें गन्दा कर देते हैं। कोई विशेष जरूरत की छोटी-मोटी वस्तु मंगानी हो तो गांव के बाजार से

व्यवस्थापक मंगा देते हैं। परन्तु जिन वस्तुओं को अपने साथ लाने के लिए कहा गया है उन्हें तो साधक अपने साथ ही लाए।

एक और समस्या रेल्वे टिकट बुकिंग की आती है। इस छोटे से स्टेशन पर आरक्षण-टिकटें देने की समुचित व्यवस्था नहीं है। शिविर-कार्य में व्यस्त धर्मसेवकों के लिए साधकों की वापसी टिकटें बुक करवाना असंभव सा हो गया है। अतः साधक यहां आने की टिकट बुक कराते समय यदि अपनी वापसी यात्रा की टिकट भी वहीं से बुक कराकर आए तो समय रहते कान्फर्मेशन मिलनी आसान हो जाय।

नियमावली को बिना पढ़े, समझे और स्वीकार किए चले आने के कारण इस प्रकार की अनेक कठिनाइयां सामने आती रहती हैं जिससे न केवल धर्मसेवक बल्कि स्वयं साधक भी कष्टकारी भागी बनता है और यथोचित धर्मलाभ से वंचित रह जाता है।

निश्चितरूप से विद्यापीठ में आने वाले सभी साधक इस प्रकार की गैरजिम्मेवारी का व्यवहार नहीं करते अन्यथा एक भी शिविर सफलतापूर्वक सम्पन्न न हो पाता। सच्चाई यही है कि अधिकांश संख्या में साधक गम्भीरतापूर्वक समर्पितभाव से ही काम करते हैं फिर भी जो थोड़े से लोग गैरजिम्मेदाराना व्यवहार करते हैं उससे शिविर की गम्भीरता नष्ट होती है और सब के लिए कठिनाई पैदा होती है।

जो साधक शिविर के दौरान अनुशासन पालन नहीं करते, बेचारा धर्मसेवक उनके पीछे-पीछे भागता रहता है और उनसे आर्य-मौन पालन करते हुए समय-सारिणी के अनुसार काम करते रहने की प्रार्थना करता रहता है।

ऐसी समस्याओं से जूझते हुए धर्मसेवक को लगता है कि वह पुलिसवालों जैसे काम में लगकर साधकों के तिरस्कार का केन्द्र बन चला है। कुछ साधक तो कभी-कभी धर्मसेवक के प्रति अत्यन्त अशोभनीय व्यवहार करते हैं। ऐसे साधकों को समझना चाहिए कि धर्मसेवक अपना कोई स्वार्थ साधने अथवा अपने लाभ के लिए काम नही करता। अपितु वह केवल धर्म-शिक्षक के निर्देशनों पर काम करता है और निस्वार्थरूप से दूसरों का सहायक बनता है ताकि वे साधना की यह विद्या सीखकर अपने दुःखों से मुक्त हो सकें। यदि कोई व्यक्ति इस विधिका एवं आचार्य का आदर करता है तो उसे इन धर्मसेवकों के प्रति सहयोग और सहानुभूति का भाव रखना ही चाहिए जो कि आचार्य के प्रशिक्षण-कार्य में मात्र सहायक हैं। अनुशासन का पालन किए बिना कोई व्यक्ति अभ्यास में निरन्तरता नहीं ला सकता और बिना निरन्तरता लाए अपने मानस की गहराइयों का आपरेशन नहीं कर सकता।

धर्मसेवक ने स्वयं धर्मरस चखा है और स्वानुभवों से जान गया है कि **सब्ब रसं धम्मरसं जिनाति** धर्म का रस सब रसों से बढ़कर है। और इसीलिए यह भी जान गया है कि **सब्बदानं धम्मदानं जिनाति** याने धर्म का दान ही सर्वोपरि है। इसी कारण धर्मदान के महान यज्ञ में अपनी निस्वार्थ सेवा अर्पित करता है। ताकि अधिक से अधिक दुखियारे दुःखमुक्त हों। ऐसे मंगलभावी धर्म-स्वयं-सेवक के सेवाकार्य में सहयोग दें!

जो पुराने साधक नयों को उत्साहित करके शिविर में भेजते हैं वे भी स्वयं धर्मरस चख चुके हैं और इसीलिए औरों को धर्मरस चखने भेजते हैं परन्तु उनमें से जो उपरोक्त भूलें करते हैं, उन्हें भविष्य में सावधान रहना चाहिए। जिसे भी भेजें, शिविर के कठोर स्वानुशासन के प्रति पूरी जानकारी देकर ही भेजें ताकि वह गम्भीरतापूर्वक काम करके अपना भी भला साध सके तथा औरों के भले मे भी सहायक बन सके।

दस दिन गृह-त्यागकर किसी शिविर में सम्मिलित होना सरल नहीं है। जो आएं वो धर्मलाभ से वंचित न रह जांय। सभी धर्मरस चखें और अपना मंगल साधें!

मंगल मित्र,
स. ना. गो.